Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 19, Issue No. 4, July-2022, ISSN 2230-7540

हिन्दू विवाह और कानूनी अधिकार

Sanjay Kumar Sharma[1]*, Dr. Kuldeep Singh[2]

[1] Research Scholar, OPJS University

[2] Associate Professor, Department of Law, OPJS University

सार - ***"विवाह एक ऐसा रिश्ता है जिसमें आम आदमी की गहरी दिलचस्पी होती है और यह एक ऐसा मामला है जो उस राज्य या संप्रभु द्वारा नियंत्रित और नियंत्रित होता है जिसमें वह समृद्ध होता है या मौजूद होता है। विवाह से संबंधित सार्वजनिक नीति का उद्देश्य विवाह का पोषण और संरक्षण करना, इसे एक स्थायी और लोकप्रिय प्रथा बनाना, विवाह के पक्षों को एक साथ रहने के लिए प्रोत्साहित करना और उन्हें अलग होने से रोकना है। यह नीति संभवतः इस देश के प्रत्येक राज्य के कानूनों में व्यक्त की गई है जो कि कारणों से या पति-पत्नी के समझौते से या किसी अन्य रूप में तुच्छ हैं , सिवाय उन तथ्यों के पूर्ण और संतोषजनक प्रमाण के रूप में जो विधानमंडल ने दिए हैं शादी को। - तलाक का कारण घोषित , वैवाहिक बंधनों के विघटन को रोकने के लिए डिजाइन किया गया, ऐसे प्रावधानों का औचित्य राज्य के सामान्य हित में है, जो वैवाहिक संबंधों के स्थायित्व में निर्धारित है , तलाक का अधिकार केवल विधायी द्वारा मौजूद हो सकता है इस दृष्टिकोण में, संप्रभु द्वारा वैवाहिक अनुबंध का विनियमन और नियंत्रण इतना सरल अनुबंध नहीं है , जिसे अनुबंध करने वाले पक्ष आपसी सहमति से भंग कर सकते हैं और वैवाहिक अनुबंध केवल कानून द्वारा स्वीकार किए गए कारणों के आधार पर भंग किया जाता है।***

----------X----------

परिचय

विवाह सामाजिक संगठन का एक अनिवार्य आधार है और कानूनी अधिकारों और दायित्वों की आधारशिला भी है। वैवाहिक संस्थाएं समाज को स्थिरता प्रदान करने के साथ-साथ व्यक्ति की सुरक्षा भी सुनिश्चित करती हैं। हिंदू कानून के तहत, विवाह को एक संस्कार माना जाता है और इसे भंग नहीं किया जा सकता है। शुरुआत में विवाह मजबूती से स्थापित था और वैवाहिक संतुष्टि नहीं थी। लेकिन समय के साथ यह स्वीकार किया गया कि असाधारण परिस्थितियों में वैवाहिक राहत की व्यवस्था आवश्यक है। इस संबंध में अमेरिकी न्यायशास्त्र के पृष्ठ 154 (धारा 12) पर निम्नलिखित कथन दिया गया है-

हिंदू कानून में, वैवाहिक अधिकारों की बहाली और न्यायिक अलगाव ऐसे उपाय हैं जो पार्टियों को एकजुट होने का अवसर प्रदान करते हैं। विवाह कानून (संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा न्यायिक अलगाव और तलाक के आधार अब एक समान हो गए हैं। न्यायिक अलगाव और तलाक कई आधारों पर प्राप्त किया जा सकता है , अर्थात, जातिवाद, क्रूरता, परित्याग, कुष्ठ, यौन रोग, मानसिक विकृति, धर्म परिवर्तन, दुनिया का परित्याग, आदि। ये ऐसे आधार हैं जिन पर पति या पत्नी तलाक ले सकते हैं , लेकिन अधिनियम पत्नी के विघटन के लिए कुछ अतिरिक्त आधार प्रदान करता है, यानी पति द्वारा बहुविवाह, पति द्वारा बलात्कार, गुदा मैथुन या अनाचार , पति के खिलाफ। और पत्नी के पक्ष में भरण-पोषण की डिक्री पारित कर दी गई है, लेकिन पति और पत्नी के बीच एक वर्ष या उससे अधिक के लिए सहवास फिर से शुरू नहीं किया गया है, पंद्रह वर्ष से कम उम्र के विवाह की पत्नी को तलाक का अधिकार होगा . लेकिन उसे 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने से पहले इस अधिकार का प्रयोग करना चाहिए।

संकीर्ण क्षेत्र

"जराता" शब्द में "विवाह के बाद अनुष्ठापित" का अर्थ है कि विवाह से पहले प्रतिवादी का चरित्र (चाहे ज्ञात हो या अज्ञात) तलाक का आधार नहीं है। अधिनियम में "स्वैच्छिक संभोग " शब्द का प्रयोग किया गया है। इसलिए, बलात्कार "स्वैच्छिक यौन संबंध " नहीं है। एक पति या पत्नी द्वारा किसी अन्य व्यक्ति के साथ

www.ignited.in

स्वैच्छिक संभोग एक जर्त का गठन करता है। जर्राटा को परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर सिद्ध किया जा सकता है। परिस्थितिजन्य साक्ष्य यह दिखाना चाहिए कि किसी बाहरी व्यक्ति के साथ यौन संबंध बनाने और उस अवसर का लाभ उठाने का अवसर था। इसलिए , बहुत कम मामलों को छोड़कर जरता का प्रत्यक्ष प्रमाण साबित करना बहुत मुश्किल होगा।[1] अधिनियम के मूल प्रावधान में "रिश्तेदारी में रहने" शब्द शामिल था , लेकिन इसे विवाह कानून (संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा छोड़ दिया गया था। अब केवल जरता का कार्य भी डिक्री प्राप्त करने के लिए पर्याप्त आधार बन सकता है।

मध्यस्थ के परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर सिद्धता स्थापित की जाती है और अदालत को संतुष्ट करने के लिए उच्च स्तर के साक्ष्य की आवश्यकता होती है। 5 मनमानी साबित करने के लिए एक चिकित्सा परीक्षा का आदेश दिया जा सकता है।

सुप्रीम कोर्ट की पांच-न्यायाधीशों की संविधान पीठ ने 158 वर्षीय भारतीय दंड संहिता , 1860 की धारा 497 को असंवैधानिक करार दिया , जिसने राजद्रोह को अपराध बना दिया था। चीफ जस्टिस दीपक मिश्रा ने जस्टिस एएम खानविलकर के साथ मुख्य फैसला सुनाते हुए कहा कि-

महिलाओं की व्यक्तिगत गरिमा और समानता को प्रभावित करने वाले कानून का कोई भी प्रावधान संविधान के प्रकोप को आमंत्रित करता है। यह स्पष्ट रूप से मनमाना है और यह कहने का समय आ गया है कि पति पत्नी का मालिक नहीं है। एक लिंग की दूसरे लिंग पर कानूनी संप्रभुता गलत है। धारा 497 स्पष्ट रूप से मनमाना है।"

मुख्य न्यायाधीश ने कहा कि देशद्रोह का अपराध राज्य को वास्तविक निजी क्षेत्र में प्रवेश करने की अनुमति देगा। मौजूदा प्रावधान के तहत, पति को पीड़ित व्यक्ति के रूप में माना जाता है और पत्नी को पीड़ित के रूप में नजरअंदाज कर दिया जाता है। वर्तमान में प्रावधान त्रिपक्षीय भूलभुलैया का प्रतिबिंब हैं। ऐसी स्थिति की कल्पना की जा सकती है जहां पत्नी को समानता और मुकदमा दायर करने का अधिकार दिया जा सके। जर्राटा अपराध की अवधारणा में फिट नहीं बैठते। यदि इसे एक अपराध के रूप में माना जाता है , तो वैवाहिक क्षेत्र की अत्यधिक गोपनीयता अत्यधिक घुसपैठ की जाएगी। जब विवाह के पक्षकार रिश्ते की नैतिक प्रतिबद्धता खो देते है प्रत्यर्थी आवश्यक विकृत-चित्त रहा हो या रूक-रूक कर उन्माद या मानसिक विकार से ग्रसित रहा हो, और रोग इस प्रकार का है कि आवेदक से उचित रूप से प्रतिवादी के साथ रहने की अपेक्षा नहीं की जा सकती। अतः उपरोक्त दोनों तथ्यों को सिद्ध करना आवश्यक है। यदि केवल एक ही तथ्य मौजूद है , तो यह तलाक का आधार नहीं होगा।[2]

सहमति से अप्राकृतिक संबंध, अपराध नहीं

भारतीय दंड संहिता , 1860 की धारा 377 में अप्राकृतिक अपराधों को परिभाषित किया गया था। लेकिन वर्तमान समय में , अप्राकृतिक संबंध अपराध नहीं हो सकते हैं , बल्कि केवल तलाक का आधार हो सकते हैं। सुप्रीम कोर्ट की पांच-न्यायाधीशों की संविधान पीठ, नवतेज सिंह जौहर और अन्य बनाम भारत संघ , सचिव, कानून और न्याय मंत्रालय के मामले में , 29 में, उल्लंघन के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 377 का सहमति वाला हिस्सा था। संविधान के अनुच्छेद 14 और 19 के। असंवैधानिक घोषित कर दिया। एलजीबीटी समुदाय के साथ भेदभाव अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है। आज जिस रूप में भारतीय दंड संहिता की धारा 377 है, उसके कारण सहमति से सहवास करना भी एक अपराध बन गया है। सहमति से यौन संबंध बनाने पर धारा 377 लागू रहेगी।[3]

पार्टियों के बीच सहवास करने में असमर्थता और नपुंसकता सहित दूसरों के साथ सहवास करने में सफलता नपुंसकता की अवधारणा विवाह के पक्षकारों तक ही सीमित है, अर्थात, यदि पति या पत्नी एक-दूसरे के साथ सहवास करने में असमर्थ हैं , लेकिन एक-दूसरे के साथ रहने में सक्षम हैं, तब भी इसे कानून की नजर में नपुंसक माना जाता है। इसमें मनोवैज्ञानिक नपुंसकता भी शामिल है। लेकिन नपुंसकता शब्द में बांझपन या बांझपन शामिल नहीं है।

जगदीश लाल बनाम श्यामा 30 मामले में न्यायाधीश जी प्रसाद ने टिप्पणी की कि-

"कुछ मामलों में एक व्यक्ति संभोग करने में सक्षम हो सकता है , लेकिन किसी विशेष व्यक्ति के साथ संभोग करने में असमर्थ है , और ऐसे मामले में उसे उस विशेष

[1] Kane, P.V: History of Dharma Shastras (Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona, Vol. II, 1975).

[2] Kumar, Nariender: Constitutional Law of India (Pioneer Publication, Delhi, 2000).

[3] Mahmood, Tahir: Hindu Law, (The Law Book Company, Allahabad, 2nd edn.1986).

www.ignited.in

व्यक्ति के संबंध में नपुंसक माना जाना चाहिए, भले ही वह आमतौर पर स्खलन हो। "

उपरोक्त दृष्टिकोण को जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय 31 और राजस्थान उच्च न्यायालय 32 द्वारा लिया गया था। सजवंती बनाम भाऊराव 33 मामले में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने कहा कि नपुंसकता शब्द में बाँझपन या बांझपन शामिल नहीं है। नपुंसकता का अर्थ है संभोग करने में असमर्थता। एक व्यक्ति जो बांझ है लेकिन संभोग करने में सक्षम है उसे नपुंसक नहीं कहा जा सकता है। उर्मिल देवी बनाम नरिंदर सिंह 34 के मामले में पत्नी के मानसिक रूप से नपुंसक होने के कारण विवाह के बाद सहवास नहीं हो सका. यह माना गया कि पति विवाह की अमान्यता का डिक्री प्राप्त कर सकता है।

आपसी सहमति से तलाक

मूल हिंदू विवाह अधिनियम , 1955 में आपसी सहमति से विवाह भंग करने का कोई प्रावधान नहीं था। लेकिन विवाह कानून (संशोधन) अधिनियम , 1976 द्वारा एक नई धारा 13बी जोड़कर विवाह के पक्षकारों की आपसी सहमति से तलाक की डिक्री प्राप्त की जा सकती है। धारा 13 बी के तहत, विवाह के पक्ष आपसी सहमति से तलाक का डिक्री प्राप्त कर सकते हैं , यदि दोनों पक्ष एक वर्ष या उससे अधिक की अवधि के लिए अलग-अलग रह रहे हैं , तो वे एक साथ नहीं रह सकते हैं और दोनों पक्षों की आपसी सहमति है। कि उनकी शादी को भंग कर दिया जाए। लेकिन सहमति बल प्रयोग या धोखाधड़ी या अनुचित प्रभाव से आच्छादित नहीं है। धारा 13बी(2) के संबंध में , हितेश भटनागर बनाम दीपा भटनागर 37 में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि यदि निम्नलिखित शर्तें पूरी होती हैं , तो डिक्री की तारीख से आपसी सहमति से तलाक भी डिक्री पारित करने का दायित्व है। -

1. विवाह के लिए दोनों पक्षों का दूसरा संकल्प याचिका दायर करने की तारीख से कम से कम 6 महीने और 18 महीने से अधिक नहीं के बाद स्थापित किया जाता है,

2. पक्षों को सुनने और ऐसी जांच करने के बाद जो न्यायालय ठीक समझे, न्यायालय संतुष्ट है कि याचिका में दिए गए कथन सत्य हैं, और 3. डिक्री पारित होने से पहले किसी भी पक्ष द्वारा याचिका को किसी भी समय वापस नहीं लिया जाता है। .

वैवाहिक विवाद में अंतिम समय तक निपटाने का प्रयास

फिलहाल सुप्रीम कोर्ट का निर्देश है कि याचिका के शुरुआती चरण में ही वैवाहिक विवादों का निपटारा मध्यस्थता से किया जाए. के. श्रीनिवास राव बनाम सुप्रीम कोर्ट डीए दीपा 38 ने सभी पारिवारिक अदालतों को पारिवारिक विवादों को मध्यस्थता के जरिए निपटाने का निर्देश दिया है. पारिवारिक न्यायालय अधिनियम की धारा 9 के संदर्भ में मामलों को मध्यस्थता केंद्र में भेजा जाना चाहिए। फैसला लिखते हुए न्यायमूर्ति रंजना प्रकाश देसाई ने कहा कि सभी मध्यस्थता केंद्र प्रारंभिक परामर्श डेस्कध्क्लीनिक स्थापित करेंगे। वे मामले के प्रारंभिक चरण में वैवाहिक विवाद को सुलझाने के लिए विस्तृत , प्रचारित और प्रभावी करने के लिए काम करेंगे। विशेष रूप से , बाल हिरासत , रखरखाव आदि से संबंधित वैवाहिक विवाद मध्यस्थता के लिए उपयुक्त हैं।[4]

इसी तरह , जितेंद्र रघुवंशी बनाम बबीता रघुवंशी 39 में सुप्रीम कोर्ट ने माना कि वैवाहिक विवाद में वर्तमान वृद्धि बरकरार है , जिसके परिणामस्वरूप न केवल पति बल्कि उसके रिश्तेदारों के खिलाफ भारतीय धारा 498 ए और 406 के तहत शिकायत दर्ज की जा रही है। दंड संहिता , इसलिए अदालतों के लिए इसे सुलझाना आवश्यक है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि एक ओर वैवाहिक राहत के लिए नई राहतों का विस्तार किया गया है और दूसरी ओर वैवाहिक विवादों को सुलझाने के लिए मध्यस्थता पर जोर दिया जा रहा है।

अन्य अधिनियमों के अन्तर्गत उपलब्ध वैवाहिक अनुतोष

हिंदू वैवाहिक राहतें हिंदू विवाह अधिनियम , 1955 तक सीमित नहीं हैं और अपने आप में पूर्ण नहीं हैं। वैवाहिक अनुतोष प्रदान करने में न्यायालय अन्य अधिनियमों , नियमों, संहिताओं आदि की सहायता लेता है , क्योंकि वैवाहिक अनुतोष अत्यंत संवेदनशील मामला है। इसलिए , अदालत अंतिम क्षण तक पक्षों के बीच समझौता करने की कोशिश करती है। विवाह की संस्था परिवार व्यवस्था को जन्म देती है और सामाजिक व्यवस्था तभी सुनिश्चित की जा सकती है जब विवाह की संस्था बनी रहे। इस प्रकार विवाह के पक्षकारों के लिए कुछ अधिकार और दायित्व उत्पन्न होते हैं। हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 के अलावा, हिंदू वैवाहिक राहत के लिए अन्य कानून बनाए गए, जिसमें हिंदू दत्तक और भरण-पोषण अधिनियम , 1956, हिंदू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम , 1856, परिवार न्यायालय अधिनियम , 1984, विशेष विवाह अधिनियम , 1954 आदि की तुलना की गई। अन्य व्यक्तिगत कानूनों

[4] Mayne, John D: Mayne's Hindu Law & Usage (Bharat Law House, New Delhi, 14th edn.,1998).

www.ignited.in

में वैवाहिक राहत - मुस्लिम तलाक , भारतीय तलाक अधिनियम, 1969 के तहत वैवाहिक राहत , पारसी तलाक अधिनियम, आनंद विवाह अधिनियम आदि।[5]

पत्नी का भरण-पोषण

इस अधिनियम में पत्नी का भरण-पोषण करना पति की व्यक्तिगत जिम्मेदारी है। पति का यह दायित्व उसके द्वारा धारित किसी संपत्ति पर नहीं, बल्कि विवाह से उत्पन्न होने वाले संबंधों पर आधारित होता है। यह पति और पत्नी के बीच कानूनी संबंध के मामले में हिंदू कानून द्वारा बनाई गई देयता है , और किसी समझौते या अनुबंध से उत्पन्न नहीं होती है। पत्नी का भरण-पोषण करने का पति का दायित्व समाप्त नहीं होता क्योंकि पति ने दूसरा धर्म स्वीकार कर लिया है।[6]

हिंदू दत्तक और भरण-पोषण अधिनियम , 1956 की धारा 18(1) में पत्नी के भरण-पोषण का प्रावधान है कि "एक हिंदू पत्नी, चाहे इस अधिनियम के लागू होने से पहले या बाद में विवाहित हो , अपने पति से आजीवन भरण-पोषण प्राप्त करेगी।" के हकदार होंगे।" भरण-पोषण पाने के लिए पत्नी को तीन शर्तें पूरी करनी होंगी। ये शर्तें हैं-

(1) पत्नी का दर्जा पाने के लिए,

(2) वह एक हिंदू है, और

(3) पति के साथ रहना।

पत्नी की हैसियत प्राप्त हो।

एक महिला जो धारा 18 के तहत भरण-पोषण का दावा कर रही है, उसके लिए यह आवश्यक है कि वह कानूनी रूप से विवाहित हो। यानी उसका और उसके पति का विवाह शून्य नहीं होना चाहिए। यदि विवाह शून्य है , तो पुरुष को पति का दर्जा प्राप्त नहीं होता है और उसकी स्थिति "प्रेमी" जैसी होती है। महिला को पत्नी का दर्जा नहीं मिलता और वह "मालकिन" के रूप में रहती है। एक शून्यकरणीय विवाह में, विवाह के पक्षकार पति और पत्नी का दर्जा प्राप्त कर लेते हैं और इसलिए शून्यकरणीय विवाह या वैध विवाह की पत्नी भरण-पोषण का दावा कर सकती है। एक पत्नी द्वारा भरण-पोषण के दावे के लिए, चूंकि यह एक पूर्व शर्त है कि वह एक पत्नी का दर्जा रखती है , एक शून्य विवाह की पत्नी या जिसे ऐसी पत्नी से तलाक दिया गया है , वह अधिनियम की धारा 18 के तहत भरण-पोषण का दावा कर सकती है। बल्कि ऐसी महिला हिंदू विवाह अधिनियम , 1955 के तहत भरण-पोषण का दावा कर सकती है। दत्तक और भरण-पोषण अधिनियम, 1956 की धारा 18 के तहत हिंदू ऐसा कर सकता है , क्योंकि न्यायिक अलगाव के बाद भी, विवाह संबंध समान रहता है।

धारा 18(1) में, "हिन्दू पत्नी" शब्द का प्रयोग उस महिला के लिए किया जाता है जिसने पत्नी का दर्जा प्राप्त कर लिया है। शून्य विवाह की महिला को पत्नी नहीं कहा जा सकता है और इसलिए धारा 18 के तहत भरण-पोषण का दावा नहीं कर सकता है। लेकिन न्यायाधीश गंगाधर राव , सी.ओ. रेड्डी बनाम लक्ष्मण 3 में, ने माना कि शून्य विवाह की पत्नी भी "पत्नी" शब्द में शामिल है। धारा 18(1) और वह भरण-पोषण की हकदार है। [7]

हिंदू दत्तक और भरण-पोषण अधिनियम की धारा 18 की कोई अन्य व्याख्या या परिणाम भयानक होंगे। कोई भी धूर्त विवाहित पुरुष एक साधारण महिला को बहला-फुसलाकर घर से निकाल देगा और कहेगा कि 'हमारी शादी बेकार है और मैं तुम्हारा भरण-पोषण भी नहीं कर सकता'।[8]

उपरोक्त मामले में विद्वान न्यायाधीश गंगाधर राव ने भरण-पोषण के सामाजिक पहलू पर अधिक और कानूनी पहलू पर कम जोर दिया। जब कोई न्यायाधीश सामाजिक पहलू पर विचार करना शुरू करता है , तो उसके लिए कानून की गलत व्याख्या करना आम बात हो जाती है। विद्वान न्यायाधीश भी इसके अपवाद नहीं थे। धारा 18 की उप-धारा (2) में प्रावधान है कि कुछ परिस्थितियों में पत्नी पति से अलग होने के बाद भी भरण-पोषण प्राप्त कर सकती है,

उन स्थितियों में से एक है जब पति की "एक और पत्नी रहती है।" यह प्रावधान 1955 से पहले हुए विवाहों की पत्नी पर लागू होता है न कि हिंदू विवाह अधिनियम , 1955 के लागू होने के बाद हुए शून्य विवाह की पत्नी पर। उदाहरण के लिए-

[5] Menski, Werner F: Hindu Law Beyond Tradition and Modernity (Oxford University Press, New Delhi 2009).
[6] Mookerjee, Ashutosh: Marriage Separation and Divorce (Kamal Law House, Kolkata, 3rd edn., 2002).
[7] Nagpal, R.C: Modern Hindu Law (Eastern Book Company, Lucknow, 1st edn.,1983).
[8] Nagpal, R.C: Modern Hindu Law (Eastern Book Company, Lucknow, 2nd edn.,2008).

www.ignited.in

एक पुरुष ने 1952 ई. में एक महिला से शादी की , फिर 1954 में बी महिला से। उस समय के प्रचलित कानून में , दूसरी महिला से शादी करना वैध था। क को अलग रहने और भरण-पोषण प्राप्त करने का भी अधिकार है।

वह हिन्दू हो

धारा 18 में जहां कहीं भी "पत्नी" शब्द का प्रयोग किया गया है, उसके आगे विशेषण "हिन्दू" लगा है, इसका अर्थ है कि भरण-पोषण पाने के लिए पत्नी का हिन्दू होना आवश्यक है। इसके अलावा , उसी अधिनियम की धारा 24 में प्रावधान है कि "कोई भी व्यक्ति भरण-पोषण का दावा करने का हकदार नहीं होगा यदि वह किसी धर्म में परिवर्तन के कारण हिंदू नहीं रह गया है। " इस प्रकार किसी अन्य धर्म में परिवर्तित पत्नी हिंदू दत्तक ग्रहण और भरण-पोषण अधिनियम, 1956 के तहत भरण-पोषण का दावा नहीं कर सकती है। धारा 18 के तहत, यदि उसे अदालत के एक आदेश द्वारा भरण-पोषण प्रदान किया गया है और उसके बाद वह दूसरे धर्म (मुस्लिम, ईसाई, यहूदी) में परिवर्तित हो जाती है। या पारसी) , उसके धर्म परिवर्तन की तारीख से भरण-पोषण का अधिकार जब्त कर लिया गया है। जाऊँगा अधिनियम में और यहां व्यापक अर्थों में प्रयुक्त "हिंदू" शब्द में बौद्ध , जैन, सिख, शैव, आर्यसमाज, ब्रह्मोसामजी और कोई भी व्यक्ति शामिल है जो चार धर्मों-मुस्लिम , ईसाई, यहूदी और पारसी में से किसी से संबंधित नहीं है। हैं।

पति के साथ रह रही हो

पति से भरण-पोषण की पूर्व शर्त कि उसे पति के साथ रहना चाहिए, अधिनियम में स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट नहीं है। लेकिन धारा 18(2) यह स्पष्ट करती है कि कुछ परिस्थितियों में पत्नी 'अलग निवास और भरण-पोषण ' का दावा कर सकती है। उप-धारा 18(1) और 18(2) दोनों को एक साथ पढ़कर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि पत्नी को पति के साथ रहना चाहिए। [9] एक पत्नी जो अपने पति के साथ रहती है , उसका भरण-पोषण पति द्वारा ही किया जाना चाहिए। पत्नी को बनाए रखने के लिए पति का दायित्व अधिनियम द्वारा प्रदान किया गया है और इस दायित्व को तभी समाप्त किया जा सकता है जब पत्नी अपनी सहमति के बिना या बिना किसी उचित कारण के पति को छोड़ दे। यदि पत्नी अपने पति के साथ एक मामूली जीवन व्यतीत करती है, तो भी वह भरण-पोषण की हकदार है , हालाँकि उसके भरण-पोषण की राशि केवल निर्वाह की राशि तक ही होगी। इस अधिनियम के लागू होने से पहले भी यही स्थिति थी।

अधिनियम की धारा 18 की उप-धारा (3) में प्रावधान है कि एक पत्नी जो शालीन है या किसी अन्य धर्म में परिवर्तित हो गई है, वह अपने पति से "अलग निवास और रखरखाव" की हकदार नहीं होगी। यहां यह ध्यान रखना उचित है कि उप-धारा (3) एक वंचित पत्नी को "अलग निवास और रखरखाव" प्रदान करने से रोकती है। इसका मतलब यह है कि बेईमान पत्नी "अलग निवास और भरण पोषण " का दावा नहीं कर सकती , भले ही उसे पति ने घर से बाहर निकाल दिया होय लेकिन ऐसे में वह सिर्फ पोषाहार की हकदार है।

1) विवाह का पंजीकरण

विवाह अधिकारी द्वारा विशेष विवाह अधिनियम , 1954 या इस अधिनियम के तहत अनुष्ठापित विवाहों के अलावा, चाहे वे इस अधिनियम के प्रारंभ होने से पहले या बाद में अनुष्ठापित हों , उन क्षेत्रों में , जहां तक यह अधिनियम विस्तारित है, विवाह अधिकारी द्वारा पंजीकृत किया जा सकता है।

(2) दाम्पत्य अधिकारों की प्रत्यास्थापन

जब पति या पत्नी ने अपने को दूसरे के साहचर्य से उचित कार.ा के बिना अलग कर लिया हो तब व्यथित प{ाकार दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिये जिला न्यायलय में आवेदन, अर्जी }ारा कर सकेÛा और न्यायालय उस अर्जी में किये गये कथनों की सत्यता के बारे में तथा इस बारे में कि आवेदन को मन्जूर न करने का कोई वैध आधार नहीं है, अपना समाधान हो जाने पर तदनुसार दाम्पत्य अधिकारों का प्रत्यास्थापन डिक्री कर सकेगा।

(3) न्यायिक पृथक्करण विषेष विवाह अधिनियम , 1954 के अनुसार

पति या पत्नी द्वारा न्यायिक पृथक्करण के लिए एक याचिका दायर की जाएगी-

1. धारा 27 की उप-धारा (1 में निर्दिष्ट किसी भी आधार पर, जिस पर तलाक के लिए याचिका प्रस्तुत की जा सकती है या

[9] S.Ram: Hindu Women and Their Rights (Commonwealth Publishers, New Delhi, 2001).

www.ignited.in

2. वैवाहिक अधिकारों की बहाली के डिक्री का पालन करने में विफलता के आधार पर जिला न्यायालय और न्यायालय, आवेदन में दिए गए बयानों की सत्यता के बारे में संतुष्ट होने पर और आवेदन की अनुमति नहीं देने के लिए कोई वैध आधार नहीं है, तदनुसार न्यायिक पृथक्करण की डिक्री बना सकते हैं। [10]

जहां अदालत न्यायिक पृथक्करण का आदेश देती है , याचिकाकर्ता प्रतिवादी के साथ सहवास करने के लिए बाध्य नहीं होगा, बल्कि याचिका के एक पक्ष द्वारा किए गए आवेदन पर और याचिका में दिए गए बयानों की शुद्धता के बारे में संतुष्ट होने पर, याचिकाकर्ता को वह रद्द कर सकता है, यदि वह ऐसा करना उचित और उचित समझता है।

(4) विवाह की अकृतता और विवाह-विच्छेद

(क) शून्य विवाह

(1) इस अधिनियम के तहत अनुष्ठापित विवाह शून्य और शून्य होगा (और विवाह के लिए किसी भी पक्ष द्वारा दूसरे पक्ष के खिलाफ की गई याचिका पर) शून्यता के एक डिक्री पर (ऐसा घोषित किया जा सकता है) यदि-

1. धारा 4 के खंड (ए) , (बी), (सी) और (डी) में निर्दिष्ट शर्तों में से कोई भी पूरा नहीं होता है, या

2. प्रतिवादी शादी के समय और मुकदमे की संस्था के समय नपुंसक होना चाहिए था।

(2) इस धारा की कोई बात किसी ऐसे विवाह पर लागू नहीं होगी, जिसे धारा 18 के अर्थ के भीतर इस अधिनियम के तहत अनुष्ठापित माना जाएगा , लेकिन अध्याय 3 के तहत ऐसे किसी भी विवाह का पंजीकरण , यदि इसे इसके तहत अनुष्ठापित माना जाता है खंड (ए) से (ई) में निर्दिष्ट किसी भी शर्त के उल्लंघन में धारा 15 को शून्य घोषित किया जाएगा।

बशर्ते कि ऐसी कोई घोषणा नहीं की जाएगी यदि धारा 17 के तहत अपील की गई है और जिला न्यायालय का निर्णय अंतिम हो गया है।

पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद

विशेष विवाह अधिनियम , 1954 के तहत आपसी सहमति से तलाक

(1) इस अधिनियम के प्रावधानों और उसके तहत बनाए गए नियमों के अधीन , दोनों पक्ष संयुक्त रूप से जिला न्यायालय में तलाक के लिए याचिका दायर कर सकते हैं, इस आधार पर कि वे एक वर्ष या उससे अधिक समय से अलग रह रहे हैं और वे सक्षम नहीं हैं एक साथ रहने के लिए और वे परस्पर सहमत हैं कि विवाह को भंग कर दिया जाना चाहिए।

(2) (उप-धारा (1) में निर्दिष्ट याचिका की प्रस्तुति की तारीख से छह महीने के बाद और अठारह महीने के भीतर दोनों पक्षों द्वारा किए गए प्रस्ताव पर) यदि इस बीच याचिका वापस नहीं ली जाती है , तो जिला न्यायालय के बाद पक्षों को सुनना और इस तरह की जांच करने के बाद, जैसा कि वह उचित समझे, इस बात से संतुष्ट होने पर कि इस अधिनियम के तहत विवाह किया गया है और याचिका में दिए गए बयान सत्य हैं, यह घोषणा करते हुए एक डिक्री पारित करें कि विवाह की तारीख से विवाह को भंग कर दिया जाएगा।

(3) कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम , 1984 के अन्तर्गत वैवाहिक अनुतोष

फैमिली कोर्ट एक्ट रूल्स , 1984 को फैमिली कोर्ट्स की स्थापना और उससे संबंधित मामलों के लिए , विवाह और पारिवारिक सुलह से संबंधित विवादों में सुलह की दृष्टि से और उनका त्वरित निपटान सुनिश्चित करने के लिए पारित किया गया था। यह जम्मू और कश्मीर राज्य को छोड़कर पूरे भारत में फैला हुआ है।

निष्कर्ष

जीवन में विवाह को बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है। विवाह पति और पत्नी के माध्यम से एक परिवार का जन्म है। विवाह सभ्यता और सभ्य परिवार का आधार है। विवाह जीवन को एक दिशा देता है। आधुनिक हिंदू विवाह ने प्राचीन हिंदू कानून की कमियों को दूर किया , जिससे समाज को घुटन महसूस हुई। इनमें मुख्य विषयों में विवाह की शर्तें, विवाह की प्रकृति, आयु-निर्धारण प्रणाली की मान्यता , वैवाहिक अधिकारों की बहाली , न्यायिक अलगाव, शून्य और शून्य विवाह , आपसी सहमति से तलाक और तलाक के आधार , बच्चों की धार्मिकता , संरक्षकता, बच्चे शामिल हैं। अभिरक्षा , भरण-पोषण,

[10] Sharma, Basant K: Hindu Law (Central Law Publications, Allahabad, 3rd edn., 2007).

www.ignited.in

उत्तराधिकार, विवाह की आयु का निर्धारण , न्यायालय का अधिकार क्षेत्र , प्रक्रिया, आदेश और आदेश , अपील का प्रावधान आदि। हिंदू विवाह अधिनियम , 1955 भारत में या भारत से बाहर रहने वाले सभी हिंदुओं पर लागू होता है , जिनका विवाह किसके द्वारा किया गया है सभी आवश्यक धार्मिक संस्कार। यदि कोई भी पक्ष भारत में अधिवासित नहीं है, तो हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 उन पर लागू नहीं होगा।

हिंदू विवाह अधिनियम , 1955 ने विवाह कानून (संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा दूरगामी प्रभाव वाले कुछ अन्य परिवर्तन किए हैं , जिनमें मुख्य रूप से आपसी सहमति से तलाक, तलाक के आधार पर समानता , न्यायिक अलगाव और तलाक की सख्ती शामिल है। प्रक्रिया में छूट आदि। हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम , 2005 ने हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 4, 6 और 30 में संशोधन किया ताकि मिताक्षरा , एक सहदायिक की बेटी , एक सहदायिक और मिताक्षरा सहदायिक के अस्तित्व के सिद्धांत को समाप्त कर दिया गया। इस संशोधन द्वारा धारा 23 और 24 को निरस्त कर दिया गया। इसलिए , 1976 के बाद से, हिंदू वैवाहिक राहत की स्थिति को सरल बनाया गया।

यदि विवाह के समय किसी भी पक्ष का पति या पत्नी जीवित है, तो दोषी पक्ष भारतीय दंड संहिता की धारा 494 और 495 के तहत दंड के भागी होगा। स्थापित रिश्तेदारी या सह-माता-पिता के संबंध के उल्लंघन में विवाह के पक्षकारों को साधारण कारावास से दंडित किया जाएगा , जो एक महीने तक बढ़ाया जा सकता है , या जुर्माना जो एक हजार रुपये तक हो सकता है , या दोनों से दंडित किया जा सकता है। उम्र का उल्लंघन दोनों में से किसी एक अवधि के कारावास से, जिसे दो वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है , या जुर्माने से, जो एक लाख रुपए तक का हो सकता है , या दोनों से दंडनीय होगा।

हिंदू दत्तक और भरण-पोषण अधिनियम , 1956 की धारा 18 के तहत , एक पत्नी अपने पति से जीवन भर भरण-पोषण की हकदार होगी, बशर्ते कि वह एक पत्नी की स्थिति का आनंद लेती हो , एक हिंदू हो और अपने पति के साथ रह रही हो। लेकिन पत्नी अलग से रहने पर भी भरण-पोषण का दावा कर सकती है। इसके लिए आधार हैं परित्याग, क्रूरता, कुष्ठ रोग, दूसरी पत्नी का होना, उपपत्नी का होना, धर्म परिवर्तन और कोई अन्य उचित कारण।

विशेष विवाह अधिनियम , 1954 को पंत पूर्ण व्यक्तिगत अधिनियम कहा जा सकता है। इसमें विवाह के पंजीकरण , दाम्पत्य अधिकारों की बहाली , न्यायिक अलगाव , शून्य विवाह, शून्य विवाह , विवाह का विघटन और आपसी सहमति के प्रावधान हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अग्रवाल, आर.के.; हिन्दू विधि, सेन्ट्रल ला एजेन्सी, (2015) पंचम संस्करण।
2. अग्रवाल, आर.के.; मार्डन हिन्दू ला , सेन्ट्रल एजेन्सी, (1999) 20वा संस्करण।
3. अल्टेकर, ए.एस.; पोजिषन आफ वूमेन इन हिन्दू सिविलाजेान।
4. कपाड़िया, के.एम.; मैरेज एण्ड फेमिली इन इण्डिया (1984)
5. काणे, पी.वी.; हिस्ट्री आॅफ धर्मषास्त्र , इण्डिया (1977)
6. केषरी, डा.यू.पी.डी.; हिन्दू विधि , सेन्ट्रल ला पब्लिकेषन्स (2013) 31वा संस्करण।
7. कोहली, डा. हरिदेव; सुप्रीम कोर्ट आन हिन्दू ला , प्रथम संस्करण
8. कृष्णन, टी.वी. गोपालन ; कोडिफाइड हिन्दू ला (1962) ख्281,
9. कृष्णामूर्ति, एस.; ला आॅफ मैरेज मेण्टेनेन्स एण्ड डिवोर्स इन इण्डिया (1989) इण्डिया।
10. कुमार, डा. सुरेन्द्र; मनुस्मृति, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट (2000) पंचम संस्करण।
11. खान, एस.एम., एण्ड कुमार, सुरेन्द्र आदि; भारत (2010), प्रकाषन विभाग सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार (2010) 54वा संस्करण।
12. गर्ग, न्यायमूर्ति ओ.पी. ; पारिवारिक विधि , यूनिवर्सल ला पब्लिसर्स (2006)

www.ignited.in

13. जैन, एम.पी.; आउटलाइन्स आॅफ इण्डियन लिगल हिस्ट्री, वाधवा एण्ड कंम्पनी, नागपुर, 5वा संस्करण

14. दीवान, पारस; आधुनिक हिन्दू विधि, इलाहाबाद ला एजेन्सी (2006), 17वा संस्करण।

15. देसाई, सत्यजीत ए.; मुल्लाज प्रिन्सिपुल्स आॅफ हिन्दू ला, बटरबथ्र्स इण्डिया, नई दिल्ली (2001), 17वा संस्करण जिल्द प।

Corresponding Author

Sanjay Kumar Sharma*

Research Scholar, OPJS University